



National Journal of Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177

NJHSR 2019 1(22):123-126

© 2019 NJHSR

www.sanskritarticle.com

डॉ० पूनम सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
शम्भु दयाल पी०जी० कॉलेज,
गाज़ियाबाद

जयशंकर प्रसाद के कथा साहित्य में नवीन समाज-दर्शन

डॉ० पूनम सिंह

शोध सार (Abstract)

हिन्दी साहित्य के इतिहास में जयशंकर प्रसाद एक ऐसे बहुआयामी रचनाकार हैं जिनकी साहित्यिक प्रतिभा काव्य, नाटक, कथा और निबंध सभी विधाओं में समान रूप से प्रस्फुटित हुई है। छायावाद युग के प्रमुख स्तंभ के रूप में उनका योगदान केवल सौंदर्यबोध या भावुकता तक सीमित नहीं है, बल्कि उनके साहित्य में गहन सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक चेतना का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है। विशेषतः उनके कथा साहित्य में समाज के विविध पक्षों—धर्म, जाति, वर्ग, स्त्री-स्थिति, राष्ट्रीयता तथा मानवीय मूल्यों—का गहन विश्लेषण मिलता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में जयशंकर प्रसाद के कथा साहित्य में निहित समाज-दर्शन का विश्लेषण किया गया है। प्रसाद का समाज-दर्शन केवल आदर्शवादी नहीं, बल्कि यथार्थवादी भी है, जिसमें सामाजिक विषमताओं, शोषण, रूढ़ियों तथा औपनिवेशिक परिस्थितियों के प्रति तीव्र प्रतिरोध दिखाई देता है। साथ ही, उनके साहित्य में एक ऐसे मानवीय समाज संरचना की परिकल्पना है जो स्वतंत्रता, समानता व सामाजिक न्याय और प्रेम पर आधारित हो।

पारिभाषिक शब्द: - छायावाद, स्वच्छंदतावाद, इतिहास बोध, नवजागरण, उपनिवेशवाद, आत्मानुभूति, समाजशास्त्रीय दृष्टि, समाज दर्शन, राष्ट्रीयता व जातीय चेतना, स्त्री विमर्श।

प्रस्तावना (Introduction)

हर महान रचनाकार अपने समय का साक्षी और आलोचक होता है। उसकी रचनाएं केवल कल्पना का परिणाम नहीं होतीं, बल्कि वे अपने युग के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिवेश से गहराई से प्रभावित होती हैं। जयशंकर प्रसाद का कथा साहित्य इसी संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण है। प्रसाद का समय भारतीय नवजागरण, औपनिवेशिक संघर्ष और सामाजिक परिवर्तन का काल था। इस युग में एक ओर जहां राष्ट्रीय चेतना विकसित हो रही थी तो दूसरी ओर समाज में व्याप्त रूढ़िवाद, जातिगत भेदभाव और स्त्री-असमानता जैसी समस्याएं विद्यमान थीं। प्रसाद अपने कथा साहित्य में इन सभी समस्याओं को समाजशास्त्रीय दृष्टि से विश्लेषित और चित्रित करते हैं। उनकी रचनाओं में एक ओर अतीत का गौरवशाली चित्र है तो दूसरी ओर वर्तमान की विसंगतियों का यथार्थ चित्रण भी मिलता है। यही द्वंद्व उनके समाज-दर्शन को विशिष्ट बनाता है।

छायावाद युग प्रवर्तक जयशंकर प्रसाद का साहित्य केवल छायावादी रोमांटिक भाव बोध तक सीमित नहीं है। उनके कथा साहित्य में सामाजिक यथार्थ, ऐतिहासिक चेतना और मानवीय संवेदनाओं के गहरे अंतर्द्वंद्व का चित्रण मिलते हैं। प्रसाद अपने पांच कहानी संग्रहों 'छाया', 'प्रतिध्वनि', 'आकाशदीप', 'आंधी' और 'इन्द्रजाल' और तीन उपन्यासों कंकाल, तितली, इरावती (अपूर्ण) से हिन्दी कथा साहित्य को समृद्ध करते हैं। इनके कथा साहित्य में समाज के विविध वर्गों—राजा-प्रजा, सामंत-किसान, मजदूर, स्त्री, बाल-वृद्ध, दलित-वंचित, जनजाति के शतधा दुःख-संघर्षों का यथार्थ चित्रण मिलता है।

Correspondence:

डॉ० पूनम सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
शम्भु दयाल पी०जी० कॉलेज,
गाज़ियाबाद

प्रसाद के कथा साहित्य में समाज-दर्शन के प्रमुख तत्व

व्यक्ति और समाज को अनुशासन में बांधने और सुसभ्य समाज बनाने में समाज दर्शन की क्रांतिकारी भूमिका है। लेखक का आत्मसंघर्ष रचनात्मक स्तर पर अपने समय, परिवेश और समाज से होता है। अतः हर लेखक की अपनी रचना दृष्टि और समाज दर्शन होता है। प्रसाद और प्रेमचंद एक ही समकाल रहते हुए दोनों का समाज दर्शन भिन्न है। प्रसाद का समाज दर्शन सांस्कृतिक संवेदना से निर्मित है। अतः उनका समाज दर्शन संस्कृति की नवीन व्याख्या है तो वहीं प्रेमचंद का सामाजिक दर्शन सामाजिक यथार्थ है।

जयशंकर प्रसाद के कथा साहित्य में समाज दर्शन को डिकोड करने के कुछ अंतःसूत्र हैं: धर्म और सामाजिक न्याय, राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक आदर्शवाद, आभिजात्य चेतना, औदात्य मूल्य- दृष्टि, आत्मसजगता, चिंतन की तार्किकता, ऐतिहासिकता, मनोभूमियों के अंतर्द्वन्द्वों की परख, प्रकृति व देशप्रेम, सामाजिक यथार्थवाद- प्रसाद इन्हीं आवयविक उपकरणों से अपने समय की अंतर्ध्वनियों को नई कथा भाषा में लयबद्ध कर रहे थे।

तत्पुगीन सामाजिक चेतना के कई आयाम हैं, जिनसे जयशंकर संवाद करते हैं। धर्म और सामाजिक न्याय की दृष्टि से प्रसाद की 'विराम-चिन्ह' कहानी महत्वपूर्ण है। कहानी का कथ्य है कि मंदिर के सिंहद्वार के समीप बुढ़िया केले, नारियल बेचती प्रसाद चढ़ाने की प्रबल इच्छा रखते हुए भी अपनी जातिगत निम्नता के कारण मंदिर में प्रवेश नहीं कर सकती थी। गरीब बुढ़िया गले हुए केले दूर से ही भगवान को अर्पित कर प्रसाद समझकर खा लेती है। लेकिन उसका बेटा राधे अछूतों के साथ हो रहे इस भेदभाव का विरोध करता है। वह संगठित तरीके से अछूतों के साथ मंदिर में जबरन प्रवेश करने की हिमाकत करता है। जहां वह मंदिर के सवर्ण व्यवस्थापकों, पुजारियों द्वारा मंदिर प्रवेश के संघर्ष प्रतिरोध में मारा जाता है। कहानी मर्यादित तब हो जाती है जब "राधे का शव दहलीज के समीप रख दिया गया। बुढ़िया दहलीज पर रखे बेटे पर शव पर झुकी और वहीं दम तोड़ दिया। मंदिर में घुसने वाले अछूतों के आगे बुढ़िया विराम चिन्ह सी पड़ी रही।" (1) जयशंकर प्रसाद 'विराम-चिन्ह' कहानी के माध्यम से धर्म और समाज दोनों प्रश्नांकित करते हैं- कैसे एक गरीब अछूत बुढ़िया को सामाजिक नियमों, वर्जनाओं का हवाला देकर समाज अपमानित करता है? कैसे धार्मिक मान्यताओं को सामाजिक भेदभाव के लिए इस्तेमाल किया जाता है? विराम-चिन्ह कहानी एक सामाजिक प्रतीक के रूप में है, जो समाज में रूकावट, एक ठहराव या एक खींच दी गई हृद की तरह है। प्रसाद का समाज दर्शन उन सभी धार्मिक, सामाजिक मान्यताओं के विरुद्ध है जो मनुष्य के विरुद्ध सामाजिक भेदभाव और असमानता के जाल बुनता है। भले ही इस कहानी पर माधवन, ई०वी० रामासामी (पेरियार), मेनन, केलप्पन के नेतृत्व में चलाये गये वैकोम सत्याग्रह (1924-25) अथवा अछूतोंद्वारा आन्दोलन का असर रहा हो। प्रसाद अपने समय से आगे जाति-धर्मगत विडम्बनाओं और साम्प्रदायिकता के भावी दुष्परिणामों को महसूस कर रहे थे। प्रसाद का समाज दर्शन उन

सभी धार्मिक, सामाजिक आचरणों के विरुद्ध है जो मनुष्य के विरुद्ध सामाजिक भेदभाव और असमानता का उत्प्रेरक है।

एक ऊर्ध्वगामी समाज दर्शन सामाजिक न्याय, सामाजिक संरचना, सामाजिक परिवर्तन, राजनीतिक दर्शन और नैतिकता जैसे घटकों पर केन्द्रित होता है। प्रसाद अपनी कहानियों में बार-बार धर्म, परम्परा और संस्कृति की मानवतावादी दृष्टि से उसकी व्याख्या करते हैं। धर्म और संस्कृति की विकृत व्याख्या के समानान्तर उसके आदर्श और वास्तविक स्वरूप को भी उद्घाटित करते हैं। प्रसाद के कथा साहित्य में धर्म का चित्रण अत्यंत आलोचनात्मक दृष्टि से किया गया है। वे धर्म के नाम पर होने वाले शोषण और पाखंड का विरोध करते हैं। 'देवदासी' कहानी इसका उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें धर्म की आड़ में स्त्री का यौन शोषण दिखाया गया है। प्रसाद मानना हैं कि धर्म यदि मनुष्य की स्वतंत्रता और सम्मान को नष्ट करता है, तो वह धर्म नहीं, पाखंड है। 'देवदासी' कहानी की 'पद्मा' को देवदासी के रूप में धर्म से ही अन्याय मिला। उसे स्त्री या देवी नहीं, मंदिर की वस्तु समझ कर धर्म-धुरन्धरों, धनिकों ने बलात् भोगा। नैरेटर अशोक पद्मा से प्रेम करता है। वह चाहता है पद्मा भी सामान्य स्त्रियों की तरह सम्पूर्ण स्त्रीत्व का सुख भोगे। वह उसे मंदिर की गर्हित धर्म परम्परा और धनिक रामास्वामी के चंगुल से आजाद करना चाहता है। नैरेटर अशोक आक्रोश में धनिक रामास्वामी से पद्मा को बचाने के लिए उसे पहाड़ से नीचे ढकेल देता है। पुजारी चिन्दरम् रामास्वामी के हत्यारे अशोक को शहर से बाहर भेजने में मदद तो करता है। लेकिन वह धर्म की चौखटे में कीलित पद्मा को देवदासी के अभिशाप से मुक्त नहीं करता। प्रसाद सामंती सत्ता और धर्म की मिली भगत से निर्मित कुप्रथाओं द्वारा स्त्री और दलित जातियों के शोषण, अवमानना और उनके व्यक्तिगत स्वाधीनता के अपहरण के प्रबल विरोधी थे। 'देवदासी' प्रथा के प्रतिरोध में अशोक का कथन द्रष्टव्य है: "पापों को देवता खोजें, मनुष्य के पास कुछ पुण्य भी है पद्मा। तुम उसे क्यों नहीं खोजती हो? पापों का न करना ही पुण्य नहीं। तुम अपनी आत्मा की अधिकारिणी हो, अपने हृदय की तथा शरीर की सम्पूर्ण स्वामिनी हो, मत डरो। मैं कहता हूं कि इससे देवता होंगे; आशीर्वाद की वर्षा होगी।" (2)

प्रसाद के 'व्रतभंग' और 'देवरथ' कहानियों में धार्मिक रूढ़ियों के विरुद्ध विद्रोह का स्वर मिलता है। प्रसाद की दृष्टि में स्त्री का सबसे अधिक शोषण धर्म संचालित सामाजिक व्यवस्था के कारण होता है। जयशंकर प्रसाद 'देवरथ' कहानी की सुजाता, 'सालवती' की सालवती और 'व्रतभंग' कहानी की राधा के माध्यम से ऐसे धर्म का विरोध करते हैं। जो स्त्रियों की सामाजिक स्थिति को नियंत्रित व कलुषित करती है। 'व्रतभंग' की राधा अपने श्वसुर कलश से कहती है कि "सिद्धि यदि इतनी अधम है, धर्म यदि इतना निर्लज्ज है, तो वह स्त्रियों के योग्य नहीं है पिता जी। धर्म के रूप में कहीं आप भय की उपासना तो नहीं कर रहे हैं?" (3) इसी प्रकार 'देवरथ' कहानी की सुजाता स्थविर से कहती है- "तो मरुंगी स्थविर; किन्तु तुम्हारा यह काल्पनिक आडम्बरपूर्ण धर्म भी मरेगा। मनुष्यता का नाश करके कोई धर्म खड़ा नहीं रह सकता!" (4)

जयशंकर प्रसाद का कंकाल (1930) उपन्यास ऊपर से स्वर्णिम और सुसंस्कृत दिखाई देने वाला भारतीय समाज और इसमें वर्णित इसकी सभी धार्मिक और सामाजिक संस्थाएं यथार्थ रूप में समाज का ही कंकाल हैं। प्रसाद इस उपन्यास में प्रयाग, काशी, हरिद्वार, मथुरा और वृन्दावन के आसपास के धार्मिक क्षेत्रों में व्याप्त धार्मिक और सामाजिक अनाचार का चित्रण करते हैं। प्रसाद लिखते हैं- “जिन्हें आवश्यकता नहीं, उनको बिठाकर आदर से भोजन कराया जाये, केवल इस आशा से कि परलोक में वे पुण्य संचय का प्रमाण-पत्र देंगे, साक्षी देंगे, और इन्हें जिन्हें पेट ने सता रखा है, जिनको भूख ने अधमरा बना दिया है, जिनकी आवश्यकता नंगी होकर वीभत्स नृत्य कर रही है-वे मनुष्य, कुत्तों के साथ जूठी पत्तलों के लिये लड़े; यही तो तुम्हारे धर्म का उदाहरण है।”(5)

प्रसाद का समाज दर्शन भारतीय संस्कृति को दूषित करने वाले हर धर्मों के नकारात्मक पक्षों की आलोचना करता है। वे हिन्दू, बौद्ध, जैन, इस्लाम, ईसाई सभी धर्मों की पाखंडपूर्ण आचरण का खंडन करते हैं। ‘सालवती’ व ‘देवरथ’ कहानियां जैन, बौद्ध धर्म के विकृत रूप की आलोचना करती हैं तो वहीं ‘स्वर्ग के खंडहर में’ इस्लाम की, ‘देवदासी’, ‘विजया’, ‘चक्रवर्ती का स्तम्भ’ आदि कहानियों में प्रसाद हिन्दू धर्म पर तीखे कटाक्ष करते हैं।

पितृसत्ता की नींव परिवार और विवाह पर टिकी है। प्रसाद आधुनिक सोच के साथ वैवाहिक संस्था को वरीयता देते हैं। जयशंकर प्रसाद ‘तानसेन’ कहानी में रामप्रसाद (तानसेन) और सौसन के विवाह का आधार दोनों की कलात्मक अभिरुचि, चयन की आज़ादी और मैत्री भाव को मानते हैं। ‘सहयोग’ कहानी में प्रसाद पति-पत्नी के बीच सामंजस्य बनाये रखने में समानता, सम्मान भाव को जरूरी समझते हैं। मोहन दलित लड़की मनोरमा से विवाह तो कर लेता है। लेकिन पत्नी की तमाम अच्छाइयों के बावजूद उसे प्रताड़ित, अपमानित करता रहता है। प्रताड़ना से आहत मनोरमा आत्मविश्वास खोने लगती है। उसे हर वक्त कुछ ग़लत न हो जाए, एक अदृश्य भय सताता रहता है। आत्म संदेह से जूझती मनोरमा बाद में अपने विनीत स्वभाव से ससुराल में आत्मीय भाव स्थापित कर लेती है। प्रसाद विजातीय आधार पर मोहन द्वारा पत्नी की अवमानना और तिरस्कार को अनुचित मानते हैं। प्रसाद समाधान देते हैं, यदि ‘दलित होना मनोरमा के तिरस्कार का कारण है तो मोहन को जाति भेद से परे होकर – “उसे द्विजन्मा कहने में कोई बाधा नहीं।”(6) होना चाहिए। इस तरह प्रसाद वर्ण व्यवस्था को जन्मना मान लेने के जड़ विचार पर कड़ा प्रहार करते हैं। उनकी दृष्टि में नारी सहज रूप में चिर संगिनी बनकर रहे, न कि दासी बनकर। प्रसाद स्त्री-पुरुष सम्बन्धों को समता के स्तर पर तरजीह देते हैं। ‘कलावती की शिक्षा’ में नारी पुरुष की सहचरी के रूप में है, अनुचरी के रूप में नहीं। कलावती कठपुतली के बहाने अपने शिक्षित पति श्यामसुंदर पर कलात्मक रीति से व्यंग्य करती है। कलावती अंतरात्मा के दासत्व को भी स्वीकार करने के पक्ष में नहीं है। प्रसाद अपने समाज में व्याप्त अनमेल विवाह, असफल दाम्पत्य जीवन, आर्थिक पराधीनता, अशिक्षा, जीवन की सामाजिक विसंगतियों को अपने कथा साहित्य का विषय बनाते हैं।

प्रसाद की स्त्रियां प्रेम और आत्मसम्मान के मामले में ज़्यादा सजग व स्वतंत्र हैं। ‘इंद्रजाल’ संग्रह की अंतिम कहानी ‘सालवती’ इतिहास, दर्शन के तत्वों से बुनी बड़े विमर्श की कहानी है। कहानी का परिवेश जैन धर्म कालीन भारत के प्रथम गणतंत्रिक राज्य वैशाली का है। यहां प्रसाद जी ने तत्कालीन गणतंत्र की सांस्कृतिक विशेषताएं और विकृतियां दोनों उद्घाटित की है। प्रसाद उस राजशाही फ़रमान के विज्ञापन व्यवस्था पर व्यंग्य करते हैं, जहां एक निर्दोष सुन्दरी के सौन्दर्य को कुटिलता से राजसम्पत्ति मान लिया जाए। ‘सालवती’ कहानी का उद्देश्य वैशाली गणतंत्र की उस कुप्रथा को दूर करना था जिसके अनुसार वैशाली की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी को नगर वधू या कुलवधू बनकर रहना पड़ता है।(7) सालवती का अंतर्मन कुलवधू बनने का सदैव प्रतिरोध करता रहा। लेकिन उसे अपने सौंदर्य के कारण यह दंड भोगना पड़ा। इस कहानी में प्रसाद स्त्री सुधार के साथ उसके सम्मानजनक पुनर्वास का आदर्श प्रस्तुत करते हैं। कहानी में राजकुमार अभय उसकी अवैध संतान के साथ उसे भी अंततः स्वीकार कर लेता है। इसके अलावा प्रसाद इस कहानी में जैन-बौद्ध, हिन्दू धार्मिक मत-मतान्तरों का समन्वय भी प्रस्तुत करते हैं। सालवती मगध के महामंत्री द्वारा दार्शनिक मत-मतान्तरों पर किये व्यंग्य के जवाब में कहती है- “वज्रियों का एक स्थिर सिद्धान्त तो है ही। राष्ट्रहित में कोई मतभेद नहीं होता।”(8) प्रसाद इस कहानी में इतिहास के बहाने सांस्कृतिक एकता पर बल देते हैं। इतिहास के प्रति प्रसाद का रुख अन्वेषणात्मक और आलोचनापरक है। उन्होंने अतीत के किसी काल खंड का चयन वर्तमान को केवल उपदेश और प्रेरणा देने के लिए नहीं, अपितु आत्म-समीक्षण के लिए, समान समस्याओं और प्रश्नों के बारे में उससे विमर्श करने के लिए चुना। यही कारण है कि उनका इतिहास बोध वर्तमान का आलोक स्तम्भ है। ‘सालवती’ कहानी में स्त्रियों की आर्थिक स्वतंत्रता पर बल दिया गया है। सालवती के पिता उसे समझाते हैं, “आर्थिक पराधीनता ही संसार में दुःख का कारण है। मनुष्य को उससे मुक्ति पानी चाहिए।”....कृतज्ञता परतंत्र बनाती है।”(9) यहां प्रसाद आर्थिक स्वतंत्रता के साथ स्त्री के मानसिक या नैतिक स्वतंत्रता को वास्तविक स्वतंत्रता मानते हैं।

प्रसाद का ‘तितली’ उपन्यास तत्कालीन सामाजिक संदर्भ में मूलतः ‘नारी मुक्ति’ की कथा है। “प्रसाद ‘नारी मुक्ति’ को आर्थिक मुक्ति से जोड़ कर देखते हैं। यहां तक कि प्रेम संबंध भी जो अभी तक नैतिक प्रश्नों से जुड़े हुए थे, यहां आकर आर्थिक प्रश्नों से जुड़ जाते हैं। सही मायने में यह जयशंकर प्रसाद का आधुनिक और प्रगतिशील दृष्टिकोण है।”(10)

जयशंकर प्रसाद कहानी ‘ग्राम’ कहानी में जमींदारों और सामंतों की जीवन पद्धति पर गहरा व्यंग्य करते हैं। इस कहानी में ऋण, व्याज और ग्रामीण विस्थापन की दुर्नियतियों की अभिव्यक्ति हुई है। वे इस कहानी में महाजनी जकड़बंदी का वह अमानवीय पक्ष उद्घाटित करते हैं, जिसमें किसान को कुंदन लाल द्वारा अपनी सारी जमीन नीलामी में गंवानी पड़ी और इस त्रासद आघात के बाद अपनी जान भी। इस कहानी में जमींदार और किसान के बीच सम्बंध का तनाव मूलतः आर्थिक है, इसलिए सजा भी सम्पत्ति पर हमले के रूप में है। इसी तरह “उनकी ‘पुरस्कार’ कहानी भी सत्ता द्वारा भूमि अपहरण (भूमि अधिकरण) की समस्या और विरोध की कहानी है।”(11) बीसवीं सदी के आरम्भिक दो दशकों का हिन्दी साहित्य प्रथम विश्वयुद्ध से कहीं न

कहीं प्रभावित रहा है। प्रसाद जहां अपने कथा साहित्य में भारत के ग्रामीण समाज की दरिद्रता देखते हैं; वहीं वे पतनशील सामंती व्यवस्था व औपनिवेशिक शोषण से त्रस्त एक तीसरी दुनिया का यथार्थ भी उद्घाटित करते हैं। इस कहानी में साम्राज्यवाद का विरोध ठोस राष्ट्रीय संदर्भ में किया गया है। 'बेड़ी', 'भिखारिन' कहानी में प्रसाद साम्राज्यवादी ताकतों से पददलित अपने समय की क्रूरताओं की शिनाख्त करते हैं। प्रसाद का कथा काल सुधारवादी आन्दोलनों का दौर था। अतः प्रसाद कहानियों के माध्यम से समाज की विसंगतियों पर प्रभावी तौर पर प्रहार करते हैं। 'मधुआ' कहानी के निठल्ले शराबी का मानवीय रिश्ता जब एक अनाथ और गरीब मधुआ से जुड़ता है तो वह उसके प्रति अपने दायित्वबोध के कारण न केवल शराब पीना छोड़ देता है, बल्कि श्रम करके जीविका अर्जित करने वाला पारिवारिक जीव बन जाता है। प्रसाद की कहानियों में आर्थिक जीवन एक जटिल और बहुस्तरीय समीकरणों के साथ निहित है। उन्होंने विभिन्न आर्थिक स्थितियों, सामाजिक वर्गों और धन के प्रभाव को दर्शाकर अपने समय का एक यथार्थवादी चित्र प्रस्तुत किया है।

प्रसाद के लिए देश की परतंत्रता समकालीन यथार्थ का महत्वपूर्ण पक्ष है। वे पराधीनता के उन कारकों की खोज करते हैं जिसके कारण समग्र रूप से राष्ट्रीय चेतना विकसित नहीं हो पा रही थी। प्रसाद 'दासी' कहानी में बलराज के माध्यम से कहते हैं – "हमारी धार्मिक भावनाएं बंटी हुई हैं, सामाजिक जीवन दम्भ से और राजनीतिक क्षेत्र कलह और स्वार्थ से जकड़ा हुआ है। शक्तियां हैं पर उनका कोई केन्द्र नहीं। किस पर अभिमान हो, किसके लिए प्राण दूं?"⁽¹²⁾ प्रसाद मानते हैं कि राष्ट्रीय एकता और स्वाभिमान के बिना स्वतंत्रता संभव नहीं है। सिकंदर की शपथ, 'ममता', 'शरणागत' जैसी कहानियों में राष्ट्रप्रेम और त्याग की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। प्रसाद मानते हैं कि राष्ट्रीय एकता और स्वाभिमान के बिना स्वतंत्रता संभव नहीं है।

जयशंकर प्रसाद का समाज दर्शन मानवीय गरिमा का पक्षधर है। वे स्त्री-पुरुष दोनों की आइडेंटिटी, उसकी स्वतंत्रता को समान रूप से महत्वपूर्ण मानते हैं। यही कारण है कि उनके कथा चरित्रों में प्रतिरोध का स्वर प्रबल है। इसकी बड़ी वजह "छायावाद का व्यक्ति - स्वातंत्र्य सामंती मर्यादाओं के विरुद्ध बहुत बड़ा कदम है।"⁽¹³⁾ प्रसाद की 'आकाशदीप' कहानी अत्यंत वैयक्तिक, अंतरंग और मानवीय सम्बंधों के कोमल तंतुओं से बुनी हुई जातीय इतिहास की खोज करने वाली सांस्कृतिक सम्बंधों की कहानी है।⁽¹⁴⁾ प्रसाद के कथा साहित्य में सामाजिक यथार्थवाद और आदर्शवाद का अद्भुत समन्वय है।

निष्कर्ष (Conclusion)

जयशंकर प्रसाद का कथा साहित्य हिन्दी साहित्य की अमूल्य धरोहर है। उनके समाज-दर्शन में भारतीय संस्कृति की गहराई, मानवीय संवेदनाओं की व्यापकता और सामाजिक चेतना का अद्भुत समन्वय मिलता है। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से न केवल समाज की समस्याओं को उजागर किया, बल्कि उनके समाधान की दिशा भी प्रस्तुत की। प्रसाद का साहित्य इस सामुदायिक भावना को पुष्ट करता है कि सच्चा धर्म मानवता है, सच्ची संस्कृति समानता है और सच्चा समाज वही है जिसमें सभी को सम्मान और स्वतंत्रता प्राप्त हो।

संदर्भ (References)

1. प्रसाद जयशंकर: जयशंकर प्रसाद की सम्पूर्ण कहानियां, विराम चिह्न (कहानी), अतुल्य पब्लिकेशंस, दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ:358
2. पूर्वोक्त, प्रसाद जयशंकर, देवदासी (कहानी) पृष्ठ: 44
3. पूर्वोक्त, प्रसाद जयशंकर, व्रत-भंग (कहानी) पृष्ठ 31
4. पूर्वोक्त, प्रसाद जयशंकर, देवरथ (कहानी) पृष्ठ 354
5. प्रसाद जयशंकर: कंकाल, राजकमल प्रकाशन पेपर बैक्स, प्रथम संस्करण: 1988, पांचवीं आवृत्ति 2010
6. प्रसाद जयशंकर: जयशंकर प्रसाद की सम्पूर्ण कहानियां, विराम चिह्न (कहानी), अतुल्य पब्लिकेशंस, दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ:104
7. पूर्वोक्त, प्रसाद जयशंकर, सालवती (कहानी), पृष्ठ:360
8. पूर्वोक्त, प्रसाद जयशंकर, सालवती (कहानी), पृष्ठ:361
9. पूर्वोक्त, सालवती, पृष्ठ: 361
10. सिंह विजयमोहन: आधुनिक हिन्दी गद्य साहित्य का विकास और विश्लेषण, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2014, पृष्ठ:139-140
11. सिंह विजयमोहन: समय और साहित्य, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ: 241
12. पूर्वोक्त, दासी (कहानी), पृष्ठ:156
13. सिंह नामवर, (2001) : आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियां, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण: 2001, पृ०33
14. सिंह विजयमोहन: समय और साहित्य, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2012, पृष्ठ: 241-242